THE TIMES OF INDIA

Date: 21-04-26

Robots Are Coming

Their growing physical capabilities, combined with AI's rapid strides, may pose an existential crisis for our species

TOI Editorials

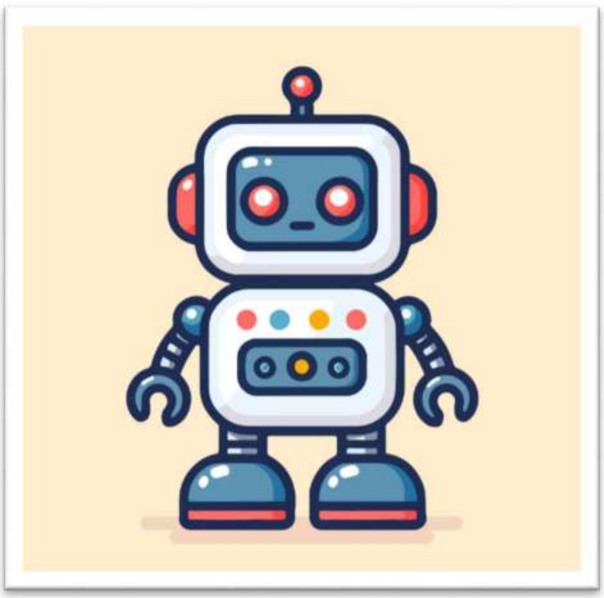

The world changed on Feb 10, 1996, when IBM's Deep Blue computer beat Garry Kasparov at a game of chess. It changed again last Sunday, when a humanoid robot beat the men's half-marathon record by a mile, in Beijing. Nobody doubted it would happen someday, but not so soon after last year's fiasco, when the winning robot made it to the finish line in 2 hours and 40 minutes. This year's winner took just 50 minutes and 26 seconds, averaging 25kmph. How fast could humanoid robots be next year? T-1000, chasing cars and bikes in 1991's Terminator 2 , doesn't look unrealistic anymore.

There are much faster robots, of course. A driverless bullet train doing 350kmph, for example. But we don't feel challenged by them. Humanoid robots, on the other hand, fascinate us with their form, and their possibilities. Nobody's afraid of a string puppet that looks and acts human. But an autonomous human-shaped robot that appears to think better than us, and outperforms us physically, is threatening. Happily, there aren't too many of them around at the moment. Last year, only 14,500 were sold across the world, 90% of them made in China. But robot evangelists see a big shift coming. Musk, who's developed the Optimus robot, plans to make a million every year. Morgan Stanley predicts over a billion humanoids in service by 2050.

That could be a problem. If tireless robots, who never demand downtime, replace blue-collar work, what will the vast majority of humans do? When Czech writer Karel Capek coined the word 'robot' in 1920 – robota means slave labour in Czech – he was worried industrialisation was turning humans into machines. Now the fear is, machines will make humans redundant. We could do nursing and caring jobs – at least that was the hope – but Big Tech doesn't want that. Remember 2016's Audrey Hepburn-inspired Sophia robot? It had a patented skin to form 62 facial expressions. While it was glib then, current AI would boost its conversational skills exponentially. And ask yourself, what's the point of humanoid robots with hands and sensitive fingers? You don't need those features to weld car frames in factories. They are there to operate machines made for humans – microwaves, dishwashers, TV remotes – change bedsheets, pour coffee. We might thank humanoids, when they do dangerous rescue jobs after earthquakes and fires, but generally, we'll watch their growing capabilities with a wary eye. Even Johnny Sokko, that once-famous Manga comic character, who would be 70-something now, ought to keep tabs on his Flying Robot.

THE HINDU

Date: 21-04-26

The price of negligence

Human involvement in hazardous industries must be minimal

Editorial

In yet another gruesome explosion at a fireworks unit on April 19 in Tamil Nadu's southern Virudhunagar district, 25 workers were killed and eight others injured. The number of injured went up to 20, including policemen and firefighters, after another explosion occurred at the unit later. In the past four years, at least 134 people have died and 89 have been injured in such explosions in the district, which is known for its concentration of fireworks units. It is an outright misnomer to describe this type of explosion as an accident, as any preliminary investigation would reveal. Accidents are associated with elements of surprise and unanticipated occurrence. But in the case of Virudhunagar, it is known to every worker — even if no separate sensitisation course is conducted — that the firecracker industry is hazardous and that any negligence of safety norms can result in disaster. Moreover, such explosions have occurred at regular intervals in the district, claiming the lives of scores of workers, most of whom come from economically weaker sections of society. Beyond expressing condolences and announcing solatium, the authorities at the Union and State levels have done little of substance to reduce, if not eliminate, the risk of such explosions. What they should and could have done is intensify meaningful monitoring, the absence of which is now and then felt in the form of explosions.

The Virudhunagar incident has brought into focus the role of law enforcement authorities in ensuring proper supervision, as the unit in question was operating on a Sunday — observed as a holiday by the fireworks industry — apparently without permission. Contrary to the norms specified in the licence issued by the district authorities, which allow only a dozen people to work in any fireworks unit at any given time, 40 people were present at the unit at the time of the explosion on Sunday. These two aspects, judging by the frequency of such explosions, are not unique to this particular fireworks unit. Official inspections may have taken place but they would have been carried out more as a ritual than as a meaningful exercise. There have, of course, been reports of a manpower shortage within the monitoring authorities. While coming down heavily on wrongdoers, including unlicensed units and those working regularly in violation of safety norms, the officials should also ensure that, in the name of tighter supervision, legitimately functioning units are not subjected to harassment. They should also not gloss over the economic reality of the district where the industry provides employment to lakhs of people in a region that is largely arid and dependent on rain-fed irrigation. Sober elements in the industry should consider ways to increase the use of automation and reduce human involvement.

दैनिक भास्कर

Date: 21-04-26

एक बार फिर शांति के प्रयासों पर टिकी नजरें

संपादकीय

होर्मुज बंद हुआ, खुला, फिर बंद हो गया। वार्ता सफल हुई, विफल हुई, फिर जारी रही। अंतिम अवसर की धमकी देना और यह कहना कि वार्ता सफल करो नहीं तो संस्कृति बर्बाद कर देंगे - यह सब क्या किसी तार्किक दुनिया में पहले कभी हुआ है? सुकरात ने कहा था कि मनुष्य स्वभावतः अच्छा होता है और गलती उसकी अज्ञानता से, कॉग्निटिव (संज्ञात्मक) असफलता के कारण होती है। वर्तमान वैश्विक संकट में कौन गलती कर रहा है? यह कैसी शांति वार्ता है, जिसका एक कदम बगैर धमकी के शुरू नहीं हो रहा है? अगर आज भी युद्ध पूरी तरह खत्म हो जाए तो दुनिया अगले पांच साल तक युद्ध - पूर्व की स्थिति में नहीं आ सकेगी। गरीब देशों के करोड़ों लोग इसके सबसे बड़े शिकार बन चुके हैं। कौन दे रहा है किसी ट्रम्प को या ईरान की किसी मजलिस-ए-खोब्रेगन - ए - रहबरी (विशेषज्ञों का सदन) को यह शक्ति कि वे दुनिया को तबाह करने का हौसला ही न रखें, खुलेआम इसका इजहार भी करें ? क्या ट्रम्प को इजाजत है कि वे ईरान को बम न बनाने दें, लेकिन ऐसे बमों का जखीरा रखने वाले पाकिस्तान से इतनी दोस्ती रखें? उसकी जमीन का शांति वार्ता के लिए उपयोग करें ? खुद अमेरिका जब स्कूली बच्चों पर बम गिराता है। तो वह क्या शांति का पैगाम कहलाता है ? बहरहाल, दुनिया एक बार फिर समझौते के नए प्रयासों को टकटकी लगाए देख रही है।

Date: 21-04-26

महिला आरक्षण पर निर्मित शंकाओं का समाधान जरूरी

संजय कुमार, (प्रोफेसर व राजनीतिक टिप्पणीकार)

यह तो स्पष्ट ही है कि महिला आरक्षण विधेयक के क्रियान्वयन को लेकर भले कुछ आशंकाएं, शर्तें और चिंताएं हों, लेकिन विपक्ष की ओर से सुनाई देने वाली तीखी आवाजें महिला आरक्षण नहीं, परिसीमन विधेयक को लेकर हैं। चूंकि संसद के विशेष सत्र में दोनों विधेयकों को एक साथ चर्चा के लिए लाया गया, इसलिए यह धारणा बनाई गई कि विपक्ष महिला आरक्षण विधेयक के क्रियान्वयन में बाधा डाल रहा है। परंतु क्या वास्तव में दोनों विधेयकों को साथ लाना आवश्यक था? क्या यह संभव नहीं था कि महिला आरक्षण और परिसीमन विधेयक को अलग-अलग चर्चा और क्रियान्वयन के लिए प्रस्तुत किया जाता?

शायद ऐसा किया जा सकता था, लेकिन सरकार ने उन्हें साथ लाने का निर्णय इसलिए लिया होगा क्योंकि ये दोनों परस्पर जुड़े हुए हैं। 2023 में पारित महिला आरक्षण विधेयक में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि अगली परिसीमन प्रक्रिया पूरी हुए बिना 33 प्रतिशत सीटों का आरक्षण लागू नहीं किया जा सकता।

और नवीनतम जनगणना के आधार पर ही परिसीमन प्रक्रिया पूरी हो सकती है। इस प्रकार, महिलाओं के लिए सीटों के आरक्षण का क्रियान्वयन लोकसभा और विधानसभाओं में सीटों के पुनर्समायोजन तथा परिसीमन आयोग द्वारा निर्वाचन क्षेत्रों की सीमाओं के पुनर्निर्धारण से संवैधानिक रूप से जुड़ा हुआ है।

पूर्व में पारित किए गए विधेयक के प्रावधानों के अनुसार यह तो ठीक है कि महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत सीटों का आरक्षण लागू करने से पहले परिसीमन प्रक्रिया का पूरा होना आवश्यक है, लेकिन दोनों विधेयकों को एक साथ प्रस्तुत करने से शक पैदा हुआ कि महिला आरक्षण विधेयक के क्रियान्वयन को बिना स्पष्ट नियम तय किए परिसीमन प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के औजार के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है।

यह भ्रम मुख्यतः इस कारण उत्पन्न हुआ था कि प्रस्तावित लोकसभा सीटों की संख्या को बढ़ाकर 815 से 850 तक किए जाने के बारे में अलग-अलग स्रोतों से अलग-अलग आंकड़े सामने आए थे। लोकसभा में सीटों की संख्या बढ़ाने के लिए किस फॉर्मूले का उपयोग किया जाएगा, इस पर स्पष्टता के अभाव ने भी भ्रम को और गहरा किया। सदन में जो कहा गया (प्रत्येक राज्य में वर्तमान सीटों की संख्या को 50 प्रतिशत बढ़ाना), वह चर्चा के लिए प्रस्तुत विधेयक में दिखाई नहीं दिया।

इसके अलावा, जहां मौजूदा नियम स्पष्ट रूप से यह कहते हैं कि अगला परिसीमन नवीनतम जनगणना के आधार पर होगा, वहीं विधेयक में इसे बदलकर 2011 की जनगणना के आधार पर परिसीमन करने का प्रस्ताव रखा गया। यह तब है, जब 2026 की जनगणना प्रक्रिया पहले ही शुरू हो चुकी है और डेटा संग्रह में डिजिटल तकनीक के उपयोग के कारण इसके अतीत की जनगणनाओं की तुलना में अधिक शीघ्रता से पूरा होने की सम्भावना है।

जहां सैद्धांतिक रूप से ऐसा जताया गया है कि महिला आरक्षण के क्रियान्वयन को लेकर कोई खास विरोध नहीं है, फिर भी इससे जुड़ी चिंताएं बनी हुई हैं। एससी-एसटी के लिए सीटों के आरक्षण को लेकर स्पष्ट प्रावधान हैं, वहीं महिला उम्मीदवारों के लिए सीटों के आरक्षण में कौन-सा मानदंड लागू होगा, इस पर पर्याप्त स्पष्टता नहीं है।

माना जा रहा है कि दलित और आदिवासी समुदायों की महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित की जाएंगी, लेकिन इस संबंध में संदेहों को दूर करने की आवश्यकता है। स्थानीय निकाय चुनावों की तरह ओबीसी महिलाओं के लिए भी सीटें आरक्षित करने की मांग उठ रही है। इन मुद्दों को स्पष्ट रूप से सामने रखना आवश्यक है, ताकि उनसे जुड़े संदेहों को दूर किया जा सके।

विपक्षी दलों ने चिंता जताई है कि जहां एससी और एसटी के आरक्षण को संवैधानिक आधार प्राप्त है, वहीं महिलाओं के लिए ओबीसी आरक्षण का वर्तमान विधेयक में कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं है। चूंकि ओबीसी समुदाय भारत की आबादी का बड़ा हिस्सा है, इसलिए उन्हें महिला आरक्षण से बाहर रखना विधेयक के प्रस्तावित उद्देश्य के लिए बाधा बन सकता है। अब कुछ विपक्षी दल इस पर जोर दे रहे हैं कि इस कमी को दूर करने के लिए या तो संविधान संशोधन किया जाए या फिर एक स्पष्ट नीतिगत प्रतिबद्धता दी जाए।

यह आवश्यक है कि सरकार व्यापक परामर्श के माध्यम से इन चिंताओं का समाधान करे। सत्तारूढ़ गठबंधन और विपक्षी दलों- दोनों को शामिल करते हुए द्विपक्षीय सहमति न केवल परिसीमन प्रक्रिया को अधिक वैधता प्रदान करेगी, बल्कि यह भी सुनिश्चित करेगी कि महिला आरक्षण अनावश्यक विवादों के कारण दब न जाए।

सत्तारूढ़ गठबंधन और विपक्षी दलों- दोनों को शामिल करते हुए द्विपक्षीय सहमति न केवल परिसीमन प्रक्रिया को वैधता प्रदान करेगी, बल्कि यह भी सुनिश्चित करेगी कि महिला आरक्षण अनावश्यक विवादों में न फंस जाए।

Date: 21-04-26

देश में नई उम्मीदों के साथ ही कुछ चुनौतियां भी मौजूद हैं

कौशिक बसु, (विश्व बैंक के पूर्व चीफ इकोनॉमिस्ट)

पिछले छह वर्ष विश्व के लिए कठिन रहे हैं, जिसमें कोविड-19 महामारी और यूक्रेन तथा गाजा में युद्ध शामिल हैं। मध्य-पूर्व में इजराइल और अमेरिका द्वारा ईरान पर हमला करके शुरू किया गया अनावश्यक युद्ध तो विश्व को और गहरे संकट में डुबो चुका है। चूंकि हम एक वैश्वीकृत दुनिया में रहते हैं, इसलिए यह युद्ध हर जगह आर्थिक समस्याएं पैदा कर रहा है और भारत भी इससे प्रभावित है।

एलपीजी की कमी का बड़ा नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है, विकास दर धीमी हो रही है, मुद्रास्फीति बढ़ गई है और भारतीय रिजर्व बैंक ने चेतावनी दी है कि यह और बढ़ सकती है। भारतीय रुपया अपनी सबसे तेज गिरावटों में से एक देख रहा है। वास्तव में, विश्व की प्रमुख मुद्राओं में भारतीय रुपया ही वह मुद्रा है जिसने सबसे तेज गिरावट दर्ज की है।

भारत इस युद्ध के आर्थिक असर के प्रति इतना प्रभावित क्यों बनता जा रहा है? इसका छोटा-सा जवाब यह है : जहां भारत की बुनियादें मजबूत हैं, वहीं वह व्यावसायिक नीति-निर्माण में बहुत कम प्रयास कर रहा है। हाल में भारत की अपनी छह-सप्ताह की यात्रा के बाद मैं आशावादी महसूस कर रहा था।

इस बार मैंने पिछले कई वर्षों की तुलना में अधिक शिक्षण संस्थानों और विश्वविद्यालयों का दौरा किया। यह यात्रा पुणे में पहाड़ी पर बसे सिम्बायोसिस इंटरनेशनल यूनिवर्सिटी के खूबसूरत परिसर में एक सम्मेलन से शुरू हुई। मेरा अगला पड़ाव कोलकाता था। प्रेसिडेंसी कॉलेज में एक समृद्ध इतिहास की छाया में व्याख्यान देना और उत्साही छात्रों-शिक्षकों से बात करना विशेष अनुभव था।

कोलकाता से मैं पुरुलिया भी गया, जहां मैंने फिलिक्स स्कूल के छात्रों से बात की। स्कूल अपना डिस्कवर द वर्ल्ड ऑफ इकोनॉमिक्स कार्यक्रम चला रहा था। पूरे भारत से छात्र आए थे ताकि वे गणितज्ञ महान महाराज, अर्थशास्त्री प्रभात पटनायक और अन्यों के व्याख्यान सुन सकें। इस आदिवासी क्षेत्र के बीच, आसपास के गांवों के साथ-साथ बड़े शहरों के छात्रों के साथ अर्थशास्त्र, राजनीति और ज्यामिति पर चर्चा करते हुए आशावादी महसूस न करना असंभव था।

अंतिम पड़ाव दिल्ली था, जहां मैंने गुरु गोबिंद सिंह कॉलेज ऑफ कॉमर्स में व्याख्यान दिया। वहां दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स में पढ़ाने के समय के अपने कई छात्रों से मुलाकात की। एक बार फिर प्रतिभाशाली छात्रों और शिक्षकों से मिलना, जो उत्साह से भरे थे, भारत के प्रति मुझे आशान्वित कर गया। इन सभी स्थानों पर लोगों से बात करते हुए उनकी गर्मजोशी और बौद्धिक प्रतिभा को देखते हुए यह साफ हुआ कि भारत में बड़ी मात्रा में मानवीय प्रतिभा और कई क्षमताएं मौजूद हैं।

हालांकि, मुझे यह स्वीकार करना होगा कि जब मैं सरकार की नीति और भारत की अर्थव्यवस्था में जो हो रहा है, उसे करीब से देखता हूं (और मैं यहां ईरान युद्ध की बात ही नहीं कर रहा), तो मुझे चिंता होती है। केवल नारों पर ध्यान केंद्रित करके और जमीन पर वास्तविक नीति पर ध्यान न देकर हम अर्थव्यवस्था को गहरा नुकसान पहुंचा रहे हैं। पिछले दस-बारह वर्षों में हम शोध और आंकड़ों के क्षेत्र में पीछे खिसकते जा रहे हैं।

अब अधिकांश ध्यान हेडलाइन-जीडीपी पर है। जीडीपी देश के सभी लोगों द्वारा अर्जित कुल आय को संदर्भित करता है। लेकिन यह इस कुल राशि के जनसंख्या में बंटवारे के बारे में कुछ नहीं बताता। अगर दो-तीन परिवारों की आय बहुत बड़ी हो तो जीडीपी अच्छी वृद्धि दिखाएगा, भले ही बहुत बड़ी संख्या में लोग बेरोजगार हों और बुरी स्थिति में हों। आश्चर्य नहीं कि भारत के नेता प्रति व्यक्ति आय, युवा बेरोजगारी और आबादी के निचले 50 प्रतिशत की रहन-सहन की स्थिति के बारे में शायद ही कभी बात करते हैं।

भारत अपनी विदेश नीति में भी स्वतंत्रता खोता जा रहा है। जबकि भारत गुटनिरपेक्ष आंदोलन का नेता रहा है और अपने बौद्धिक नेतृत्व के लिए अत्यधिक सम्मानित था। मेरी तीसरी चिंता उच्च शिक्षा की है। स्वतंत्रता के तुरंत बाद शुरू किए गए आईआईटी, दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स और कई अन्य संस्थान उत्कृष्ट शिक्षा प्रदान करते थे तथा विश्व प्रसिद्ध शोधकर्ता वहां काम करते और शोध पत्र प्रकाशित करते थे। लेकिन पिछले 75 वर्षों की उच्च शिक्षा की उपलब्धियों का सम्मान नहीं करके देश के साथ बड़ा अन्याय किया जा रहा है।

मुझे आशा है कि भारत मौजूदा आर्थिक मुश्किलों से उभरेगा, अतीत की अपनी बौद्धिक उपलब्धियों को साकार करेगा और लोकतंत्र तथा धर्मनिरपेक्षता के उन आदर्शों को पूरा करेगा, जिन्होंने हमें विश्व में एक विशेष स्थान दिलाया था।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 21-04-26

नए हालात में ऊर्जा पर हो नई रणनीति

अमिताभ कांत, (लेखक एनआईआईटी यूनिवर्सिटी के चांसलर, फेयरफैक्स सेंटर फॉर फ्री एंटरप्राइज के चेयरमैन, जी20 के पूर्व शेरपा तथा नीति आयोग के पूर्व सीईओ हैं।)

पश्चिम एशिया में हाल ही में शुरू हुए संकट ने एक बार फिर से यह साबित कर दिया है कि ऊर्जा सुरक्षा की समस्या वास्तव में भौगोलिक स्थिति के कारण मुश्किल हो जाती है। अमेरिका-इजरायल-ईरान युद्ध के बीच होर्मुज स्ट्रेट से

जहाजों का आवागमन गंभीर रूप से बाधित हो गया है और दुनिया की प्रमुख शक्तियां इस बात को खुले तौर पर स्वीकार कर रही हैं कि इस कारण वैश्विक ऊर्जा आपूर्ति को लेकर जोखिम की स्थिति बन सकती है। दुनिया का लगभग 20 फीसदी तेल और तरल प्राकृतिक गैस (एलएनजी) इस संकीर्ण जलमार्ग से होकर गुजरता है और इस मार्ग के बंद होने का प्रभाव अब पूरी दुनिया में महसूस होने लगा है।

भारत अपनी तेल की जरूरतों का करीब 90 फीसदी और गैस की जरूरतों का लगभग आधा हिस्सा आयात करता है। इसके अलावा, भारत की रसोई गैस (एलपीजी) खपत का लगभग 60 फीसदी आयात से पूरा होता है और इन आयात में से लगभग 90 फीसदी होर्मुज स्ट्रेट के रास्ते से ही आता है। कच्चे तेल के मामले में भारत ने आयात स्रोतों में कुछ हद तक विविधता पर जोर दिया है लेकिन फरवरी 2026 में इसके आयात पोर्टफोलियो में पश्चिम एशिया की हिस्सेदारी 59 फीसदी तक पहुंच गई। इस युद्ध की शुरुआत से पहले भी, भारत का तेल और गैस आयात बिल सालाना लगभग 180 अरब डॉलर के करीब था।

जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता भारत के लिए एक प्रणालीगत सुरक्षा समस्या बन गई है। आयातित हाइड्रोकार्बन, भारत की अर्थव्यवस्था को उन क्षेत्रों से जोड़ते हैं, जिन पर इसका नियंत्रण सीमित है। जितना लंबा यह युद्ध चलेगा, भारत का आयात बिल उतना ही बढ़ेगा और उद्योग, कृषि, परिवहन और घरेलू जीवन पर दबाव लगातार बढ़ता जाएगा।

हालांकि, गैर-जीवाश्म ईंधन इस तरह के समीकरण में बदलाव ला सकता है जो वास्तव में जीवाश्म ईंधन के आयात पर निर्भरता से संभव नहीं है। सोलर पीवी तंत्र अब सामान्य तौर पर 25 से 35 साल तक चलते हैं जबकि पवन टर्बाइनों की उम्र 20 से 25 साल होती है। इसका मतलब यह नहीं है कि सभी जोखिम खत्म हो गए हैं। अब भी ग्रिड, स्टोरेज और विनिर्माण से संबंधित निर्भरता है जिनका प्रबंधन करना होता है। लेकिन इसका यह मतलब है कि एक बार गैर-जीवाश्म ऊर्जा क्षमता तैयार होने के बाद यह युद्ध जैसी स्थिति, नौ वहन में व्यवधान और समुद्री संकट के बीच भी काम करती रहती है। ऐसा न होने पर आयातित ईंधन की कीमतें आसमान छूने पर मजबूर होतीं।

भारत अपनी ऊर्जा क्षमता में बदलाव लाने की यात्रा में काफी आगे बढ़ चुका है और इसके पास 275 गीगावॉट से अधिक गैर-जीवाश्म ईंधन क्षमता है। भारत ने अपनी ऊर्जा परिवर्तन यात्रा में कुछ अहम कदम उठाए हैं, लेकिन इस तरह के संकट से यह साफ हो रहा है कि जो गति अब तक अपनाई गई है, वह पर्याप्त नहीं है। भारत को अपनी ऊर्जा नीति और योजना को और तेजी से बदलने की जरूरत है ताकि भविष्य में ऊर्जा सुरक्षा बेहतर हो सके।

पहला कदम, वर्ष 2030 तक अक्षय ऊर्जा लक्ष्य को 500 गीगावॉट से बढ़ाकर 1,500 गीगावॉट करना होगा। यह महत्त्वाकांक्षी लक्ष्य जरूर है लेकिन असंभव नहीं। 1,500 गीगावॉट का लक्ष्य बाजार, विनिर्माताओं, राज्यों और निवेशकों को यह मजबूत संदेश देगा कि भारत अगले पांच वर्षों में ऊर्जा परिवर्तन के अगले दशक को पूरा करने की दिशा में काम कर रहा है।

दूसरा, भारत ट्रांसमिशन और इससे जुड़े बुनियादी ढांचा के काम को बाद में पूरा करने के लिए छोड़ने पर 1,500 गीगावॉट लक्ष्य के लिए गंभीरता से प्रयास नहीं कर सकता। गुजरात, राजस्थान, कर्नाटक और तमिलनाडु के अक्षय ऊर्जा से समृद्ध क्षेत्रों में ट्रांसमिशन ग्रिड को तेजी से मजबूत करने की आवश्यकता है ताकि ऊर्जा आवागमन में बाधा कम आए और निकासी की प्रक्रिया तेज हो सके। अक्षय ऊर्जा को समन्वित करने के लिए स्थापित किए गए 11 अक्षय ऊर्जा

प्रबंधन केंद्र एक दूरदर्शी कदम थे लेकिन अब भारत को इन केंद्रों की संख्या और क्षमता दोनों को बढ़ाने की आवश्यकता है।

तीसरा, भारत को अब अपनी रणनीति बदलते हुए अक्षय ऊर्जा से जुड़ी हुई हर निविदा में बैटरी भंडारण को अनिवार्य कर देना चाहिए। केवल सौर या केवल पवन ऊर्जा वाली निविदाओं का समय अब पीछे छूट चुका है। इसके साथ ही, पंप युक्त जल भंडारण को भी एक अभियान के तहत आगे बढ़ाने की आवश्यकता है। वास्तव में, भंडारण ही वह तकनीक है जो अक्षय ऊर्जा को केवल दिन के पूरक के बजाय एक रणनीतिक बुनियादी ढांचे में बदल देती है, जिससे 24 घंटे बिजली की आपूर्ति संभव हो पाती है। इस गति को और बढ़ावा देने के लिए, भंडारण संपत्तियों पर माल एवं सेवा कर (जीएसटी) की दर को घटाकर 5 फीसदी किया जाना चाहिए जैसा कि वर्तमान में अधिकांश अक्षय ऊर्जा उपकरणों और उससे जुड़े कलपुर्जों के लिए लागू है।

चौथा, भारत में घरेलू ऊर्जा खपत के लिए एलपीजी का महत्त्व बहुत अधिक है, जिसके कारण हम भारी मात्रा में आयात पर निर्भर हैं। जिस तरह उजाला योजना के तहत थोक खरीद के जरिये एलईडी बल्बों की कीमतों में भारी कमी लाई गई थी, उसी तरह इंडक्शन कुकर के लिए भी मांग पर आधारित योजना शुरू की जानी चाहिए। इससे इसकी शुरुआती लागत में बड़ी गिरावट आएगी। गैस सिलिंडर वाली उज्ज्वला योजना के लाभार्थियों के डेटाबेस का उपयोग करके इस कार्यक्रम को तेजी से आगे बढ़ाया जा सकता है।

भारत को इलेक्ट्रिक पर आधारित वाहन और इसके लिए जरूरी चार्जिंग ढांचे पर पूरी ताकत लगानी होगी। इसके लिए जरूरी होगा कि एक स्पष्ट परिवहन विद्युतीकरण का रोडमैप तैयार हो जैसे कि नई इलेक्ट्रिक बसों की खरीद, वर्ष 2030 तक दोपहिया और तिपहिया वाहनों का विद्युतीकरण और 2035 तक कारों और ट्रकों का पूर्ण विद्युतीकरण। इसके साथ ही, आधुनिक सेल बैटरी भंडारण के लिए उत्पादन-संबंधी प्रोत्साहन योजना को दुरुस्त करना जरूरी है जिसका अब तक खराब प्रदर्शन रहा है।

अंत में सिर्फ भंडारण से आगे बढ़कर अक्षय ऊर्जा वाले तंत्र की बेहतर क्षमता बनाने की जरूरत होगी। इसमें छोटे मॉड्यूलर रिएक्टर सहित परमाणु ऊर्जा की भूमिका आती है। वर्ष 2047 तक 100 गीगावॉट परमाणु क्षमता का लक्ष्य रणनीतिक रूप से महत्त्वपूर्ण और अपरिहार्य होता जा रहा है।

साथ ही, भारत को एक निर्भरता से मुक्ति पाने के लिए दूसरी निर्भरता की ओर बढ़ने से बचना होगा। स्वच्छ ऊर्जा में बदलाव की प्रक्रिया तभी रणनीतिक रूप से टिकाऊ होगी, जब यह महत्त्वपूर्ण खनिज के मूल्य श्रृंखला पर भी जोर दे। चीन लगभग सभी रणनीतिक खनिजों का प्रमुख रिफाइनर बना हुआ है, जिसकी बाजार हिस्सेदारी औसतन 70 से 90 फीसदी है। भारत को महत्त्वपूर्ण खनिज कच्चे माल में विविधता लानी होगी, मध्यवर्ती प्रसंस्करण क्षमता विकसित करनी होगी तथा प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और क्षमता निर्माण के लिए अंतरराष्ट्रीय रणनीतिक साझेदारियों का लाभ उठाना होगा।

आयातित जीवाश्म ईंधन पर निर्भर रहने वाले देश को इसके साथ भू-राजनीतिक जोखिम के लिए भी तैयार रहना होगा। स्वदेशी स्वच्छ ऊर्जा, विनिर्माण, भंडारण और खनिज प्रसंस्करण क्षमता विकसित करने वाला देश बाहरी झटकों का बेहतर सामना कर सकेगा। मौजूदा अनिश्चितता की स्थिति में यह एक छिपा रणनीतिक अवसर है और भारत को तत्काल कार्रवाई कर इस क्षण को ऊर्जा संप्रभुता की दिशा में निर्णायक बदलाव लाना होगा।

जनसत्ता

Date: 21-04-26

खतरे का गलियारा

संपादकीय

इसमें दोराय नहीं कि देश के विकास के लिए बुनियादी ढांचे का विस्तार बेहद जरूरी होता है आम लोगों के लिए जीवनरेखा मानी जाने वालीं सड़कों का निर्माण भी इसी श्रेणी में आता है। देश में पिछले कुछ वर्षों में नई सड़कें बनाने की गति निश्चित रूप से तेज हुई है, लेकिन इसके साथ ही हादसों का सिलसिला भी बदस्तूर जारी है। विशेषकर उच्च तकनीक की मदद से तैयार किए जा रहे एक्सप्रेस-वे और राष्ट्रीय राजमार्ग चमकदार एवं सुविधाजनक जरूर दिखते हैं, मगर वे सुरक्षित सफर की कसौटी पर खरे नहीं उतर पा रहे हैं। देश में सड़कों की कुल लंबाई का केवल दो फीसद राष्ट्रीय राजमार्ग हैं, लेकिन सड़क हादसों में होने वाली मौत की कुल संख्या में इनकी हिस्सेदारी करीब तीस फीसद तक पहुंच गई है। यही वजह है कि सर्वोच्च न्यायालय ने इस पर गंभीर चिंता जताते हुए केंद्र, राज्य सरकारों और संबंधित प्राधिकरणों को सड़क सुरक्षा मजबूत करने के लिए दिशा- निर्देश जारी किए हैं। शीर्ष अदालत ने स्पष्ट कहा कि प्रशासनिक सुस्ती या बुनियादी ढांचे की कमियों के कारण एक्सप्रेस-वे खतरे का गलियारा नहीं बनने चाहिए ।

गौरतलब है कि देश में सड़क दुर्घटनाओं को कम करने के सरकार के दावों के बावजूद इनमें साल दर साल बढ़ोतरी हो रही है। केंद्रीय सड़क एवं परिवहन मंत्रालय की रपट के मुताबिक, वर्ष 2019 में देश में 4.56 लाख सड़क दुर्घटनाएं दर्ज की गई, जिनमें लगभग 1.59 लाख लोगों की मौत हो गई। वर्ष 2020 के कोरोनाकाल में पूर्णबंदी के कारण सड़क हादसों में कुछ कमी आई, लेकिन उसके बाद वर्ष 2021 में करीब 4.2 लाख, 2022 में 4.61 लाख और 2023 में 4.80 लाख दुर्घटनाएं हुई। यानी पांच वर्षों में 21 लाख से ज्यादा सड़क हादसों में करीब आठ लाख लोगों की मौत हो गई। यह आंकड़ा वास्तव में चिंताजनक है, लेकिन इसमें कमी लाने के प्रयास सरकारी कागजों से बाहर निकलकर धरातल पर प्रभावी रूप से अमल में आते नजर नहीं आ रहे हैं। सड़कों पर जिन खतरों को टाला जा सकता है, अगर उनकी वजह से लोगों की जान जाती है, तो यह स्पष्ट रूप से नागरिकों की सुरक्षा में व्यवस्था की विफलता को दर्शाता है।

हाल के दिनों में यह देखा गया है कि सड़क पर अवैध रूप से वाहन खड़ा करना दुर्घटनाओं का बड़ा कारण बन रहा है। राष्ट्रीय राजमार्गों पर भोजनालयों की बढ़ती संख्या भी इस स्थिति के लिए जिम्मेदार है, जहां वाहनों को सड़क पर बेतरतीब ढंग से खड़ा कर दिया जाता है। संबंधित महकमे की ओर से ऐसे भोजनालयों को जोखिम का आकलन किए बिना ही अनुमति दे दी जाती है। इसी के मद्देनजर सर्वोच्च न्यायालय ने अपने दिशा-निर्देशों में कहा है कि संबंधित प्राधिकरण और नियामकीय एजेंसियों को यह सुनिश्चित करना होगा कि निर्धारित स्थलों को छोड़कर राष्ट्रीय राजमार्ग पर वाहनों को कहीं भी खड़ा या रोका नहीं जाएगा। नियानुसार, राष्ट्रीय राजमार्गों पर यातायात पुलिस की नियमित गश्त का प्रावधान है, लेकिन इसमें भी विभिन्न स्तरों पर लापरवाही साफ दिखती आती है। इसके अलावा, राजमार्गों पर वाहनों की तेज गति, सड़कों के निर्माण में तकनीकी खामी और संकेतकों का अभाव एवं अस्पष्टता भी दुर्घटनाओं का कारण बनते हैं। इन व्यवस्थाओं की निगरानी के लिए उन्नत यातायात प्रबंधन प्रणाली का इस्तेमाल भी कम ही नजर आता है मगर

अब शीर्ष अदालत के निर्देशों से उम्मीद जगी है कि देश भर में यातायात व्यवस्था में सुधार होगा और सड़क हादसों में भी कमी आएगी।

Date: 21-04-26

लापरवाही की कीमत

संपादकीय

किसी भी हादसे का सबसे बड़ा सबक यह होना चाहिए कि वे हर इंतजाम किए जाएं, ताकि वैसी त्रासदी की पुनरावृत्ति न हो। मगर ऐसा लगता है कि किसी हादसे में व्यापक नुकसान के बावजूद समान स्थितियों में काम करने वाले दूसरे कारखानों में उसके कारणों पर गौर करने और भविष्य में बचने की कोशिश भी नहीं की जाती। वरना क्या कारण है कि एक ही तरह की दुर्घटनाएं बार-बार सामने आती रहती हैं और वजह के रूप में मुख्य रूप से असुरक्षित हालात में काम और लापरवाही ही दर्ज की जाती है। तमिलनाडु के विरुधुनगर में स्थित एक पटाखा कारखाने में हुए विस्फोट और उसमें पच्चीस लोगों की मौत की घटना ने एक बार फिर यही दर्शाया है कि हादसों के लिहाज से बेहद संवेदनशील माने जाने के बावजूद अव्यवस्था बदस्तूर कायम है। ख़बरों के मुताबिक विरुधुनगर की फैक्ट्री में जिस वक्त विस्फोट हुआ, उस समय रविवार को छुट्टी का दिन होने के बावजूद मजदूरों से काम कराया जा रहा था विस्फोट की तीव्रता का अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि कम से कम तीन कमरे मलबे में तब्दील हो गए और आसपास के कई भवनों को भारी नुकसान पहुंचा।

यह समझना मुश्किल है कि पर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था के अभाव की स्थिति में विस्फोटक पदार्थों के बीच काम संचालित करते हुए यह ध्यान रखने की जरूरत क्यों नहीं समझी जाती कि मामूली असावधानी के नतीजे क्या हो सकते हैं। पटाखा फैक्ट्री में विस्फोट से हुए हादसे की यह कोई अकेली घटना नहीं है। तमिलनाडु में आए दिन पटाखा कारखानों में आग लगने से लोगों की मौत की खबरें आती रहती हैं। देश के अन्य राज्यों में भी पटाखा कारखानों में आग लगने और उसमें जानमाल के नुकसान की घटनाएं अक्सर होती हैं। मगर इससे बड़ी विडंबना और क्या होगी कि न फैक्ट्री मालिक हादसों से बचने के लिए जरूरी उपाय करते हैं और न ही सरकारी तंत्र और संबंधित महकमे के अधिकारी समय-समय पर वहां की गई सुरक्षा व्यवस्था की जांच और निगरानी करते हैं। सुरक्षा इंतजामों में किसी भी स्तर पर लापरवाही बरतने और नियमों की अनदेखी पर अगर फैक्ट्री मालिकों के खिलाफ सख्त कार्रवाई सुनिश्चित की जाए, तो शायद अगले हादसों को रोकने की गुंजाइश बन सकती है।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 21-04-26

हर मामले को पुलिसिया डंडे से न हांकें

विभूति नारायण राय, (पूर्व आईपीएस अधिकारी)

कांग्रेस प्रवक्ता पवन खेड़ा को जिन हालिया अनुभवों से गुजरना पड़ा है, वे भारतीय लोकतंत्र को समृद्ध तो निश्चित ही नहीं करते। एक प्रेस-वार्ता के दौरान उन्होंने असम के मुख्यमंत्री हिमंत विश्वा सरमा की पत्नी के बारे में कुछ ऐसी टिप्पणियां कीं, जो उन्हें नहीं करनी चाहिए थीं। खेड़ा ने आरोप लगाया कि सरमा की पत्नी के पास कई देशों के पासपोर्ट और विदेश में अकूत संपत्ति है। वह इन आरोपों के बारे में पुख्ता सुबूत नहीं दे सके। आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस (एआई) के इस दौर में ऐसे दस्तावेज पेश करना कोई मुश्किल नहीं है, जो देखने में बिल्कुल असली लगें और गहन वैज्ञानिक जांच से ही पकड़ में आ सकें। मुझे इन आरोपों की विश्वसनीयता पर बात नहीं करनी, मैं उनकी प्रेस-वार्ता और उसके बाद के घटनाक्रम का जिक्र करना चाहूंगा।

यह एक दुर्भाग्यपूर्ण सच है कि पिछले कुछ दशकों से सार्वजनिक जीवन में इस्तेमाल होने वाली भाषा में आक्रामकता बढ़ती जा रही है। संयम का अभाव संसद और उसके बाहर- दोनों जगहों पर स्पष्ट देखने को मिलता है। सोशल मीडिया और एआई के बढ़ते चलन के चलते यह किसी के लिए असंभव सा हो गया है कि वह उपलब्ध सूचनाओं में नीर-क्षीर विवेक कर सके। कांग्रेस प्रवक्ता की भाषा बेहद आक्रामक थी और उनके पास जो सूचनाएं थीं, वे भी संदिग्ध स्रोतों से प्राप्त थीं, पर उनके विरुद्ध की गई कार्रवाई से बचा जा सकता था।

पवन खेड़ा के विरुद्ध असम पुलिस ने एफआईआर दर्ज कर दी और उन्हें गिरफ्तार करने दिल्ली आ पहुंची। राज्य के मुख्यमंत्री ने खुलेआम ललकारते हुए धमकी दी कि खेड़ा को जेल में सड़ा दिया जाएगा। फिलहाल वह भागे-भागे फिर रहे हैं और किसी तरह न्यायिक सुरक्षा हासिल करने का प्रयास कर रहे हैं। यदि उन्होंने कोई हस्तक्षेपीय अपराध किया था, तो उनके विरुद्ध दिल्ली में कार्रवाई की जानी चाहिए थी। तकनीकी तौर से गुवाहाटी में मुकदमा दर्ज करना अवैधानिक नहीं है, क्योंकि जिनके खिलाफ खेड़ा ने आरोप लगाया, वह वहीं रहती हैं, पर यह देखते हुए कि उनके पति प्रदेश के मुख्यमंत्री हैं, इस कदम से बचा जाना चाहिए था।

यह पहला मामला नहीं है कि किसी राज्य की पुलिस ने दूसरे राज्य में रह रहे व्यक्ति के खिलाफ वहां जाकर कार्रवाई करने की कोशिश की हो। वैधानिक रूप से सही होने के बावजूद ये मामले विवादास्पद इसलिए हो जाते हैं, क्योंकि अक्सर ऐसे मामलों में एक पक्ष कोई शक्तिशाली राजनीतिक व्यक्ति होता है। कुछ वर्षों पूर्व दिल्ली के तत्कालीन मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल के विरुद्ध भी ऐसे ही आरोप लगे थे, जब उनके बारे में विवादास्पद वक्तव्य देने वाले व्यक्ति को पकड़ने पंजाब पुलिस दिल्ली पहुंच गई थी। दिल्ली में पुलिस राज्य सरकार के आधीन नहीं है और उन्हीं दिनों पंजाब में आम आदमी पार्टी की सरकार बनी थी। आरोप लगाया गया कि केजरीवाल द्वारा विरोधियों को सताने के लिए पंजाब पुलिस का प्रयोग किया गया। उस मामले में दिल्ली और पंजाब पुलिस के बीच तनातनी भी हुई। ऐसे मामलों में दो राज्यों की पुलिस कुछ इस तरह से व्यवहार करती देखी गई हैं, मानो वे दो दुश्मन राष्ट्रों की फौजें हों।

एक सफल लोकतंत्र के लिए जरूरी है कि वह अपने नागरिकों को बोलने और विरोध-प्रदर्शन के लिए वाजिब अवसर प्रदान करे। इन गतिविधियों पर केवल तर्कसंगत नियंत्रण लगाए जा सकते हैं। दुर्भाग्य से, इस मामले में राज्यों का प्रदर्शन कोई बहुत आशाजनक नहीं है। भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता की धारा 163 (पूर्व में भारतीय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144) के तहत राज्य नागरिकों के किसी सार्वजनिक जगह पर अधिक संख्या मे एकत्रित होने या प्रदर्शन करने जैसी गतिविधियों पर रोक लगा सकता है, पर इसके लिए न्यायालयों की समीक्षा पर खरे उतर सकने लायक तर्कसंगत कारण होने चाहिए और इन आदेशों को पूर्व घोषित किया जाना चाहिए।

आजकल यह आम चलन हो गया है कि किसी भी कार्यक्रम को पुलिस यह कहते हुए रोक देती है कि उसके लिए पूर्व अनुमति नहीं ली गई है। यहां तक कि शिक्षा संस्थानों में आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रमों को यह कहकर रोका जा सकता है कि उसके लिए पुलिस की पूर्वानुमति नहीं है। इस रोक को अदालत में चुनौती दी जा सकती है, क्योंकि इसके लिए धारा 163 के तहत कोई आदेश पारित नहीं हुआ होता है, पर ज्यादातर नागरिक अदालती झंझटों से बचते हैं। फलस्वरूप, अब यह लगभग मान लिया गया है किसी भी कार्यक्रम के पहले पुलिस की इजाजत जरूरी है। यह एक अघोषित पुलिस राज्य बनाने जैसी स्थिति है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से भारतीय राज्य ने नागरिकों के सार्वजनिक प्रदर्शन के कुछ अधिकारों को घोषित और कई बार अघोषित रूप से मान लिया था। इनमें छात्र और श्रमिक दो तबके ऐसे थे, जिनकी सार्वजनिक स्थानों पर थोड़ी-बहुत उच्छृंखलता को भी राज्य नजरंदाज करता था। छात्र या मजदूर सड़कों पर इकट्ठे होकर प्रदर्शन करते, तो उन्हें कम से कम बल प्रयोग करके तितर-बितर करने में विश्वास किया जाता था। कई बार कुछ मुकदमे कायम भी हो जाते, तो अधिकांश बिना किसी सख्त कार्रवाई के धीरे-धीरे अपनी मौत मर जाते। राज्य द्वारा अपनी नजरें फेरकर असंतोष की सार्वजनिक अभिव्यक्ति का मौका देना लगभग प्रेशर कुकर के अंदर से भाप निकलने में सहायक सीटी जैसा था। लोगों को गुस्सा निकालने का मौका देकर कोई राज्य उन परिस्थितियों से बच सकता है, जो अंततोगत्वा जेन-जी जैसे आंदोलनों में परिवर्तित हो जाते हैं।

असंतोष के चलते सार्वजनिक आक्रोश के विरुद्ध राज्य की प्रतिक्रिया का एक उदाहरण हमें नोएडा के हालिया मजदूर आंदोलन में देखने को मिला। अपनी वेतन-वृद्धि को लेकर बड़ी संख्या में मजदूर सड़कों पर निकले और कुछ जगहों पर हिंसा भी हुई, मगर जिस तरह उन्हें देशद्रोही और उससे भी बढ़कर आईएसआई का एजेंट घोषित कर दिया गया, वह चिंताजनक था। उनके आंदोलन के चलते आनन-फानन वर्षों से लंबित वेज बोर्ड का गठन किया गया और रातोंरात उनके वेतन में वृद्धि की गई। राज्य को समझना होगा कि वे कुछ भी हो सकते हैं, पर आईएसआई के एजेंट नहीं। यदि राज्य उनकी नहीं सुनेगा, तो वे कहां जाएंगे? कई सौ मजदूरों को गिरफ्तार किया गया था, वे धीरे-धीरे जेलों से बाहर आ रहे हैं। उन पर दर्ज मुकदमे वापस लेने से हमारा लोकतंत्र मजबूत ही होगा।